1.1.प्रस्तावना

वैदिक सूक्त से सम्बन्धित यह द्वितीय इकाई है। इस इकाई के अन्तर्गत आप पृथिवी के स्वररूप व उनके कार्यों का अध्ययन करेंगे। पृथिवी सूक्त अथर्ववेद के बारहवें काण्ड का प्रथम सूक्त है। इस सूक्त में कुल 63 मंत्र हैं। उक्त सूक्त के मन्त्रदृष्टा ऋषि अथर्वा है। (गोपथ ब्राह्मण के अनुसार अथर्वन् का शाब्दिक अर्थ गतिहीन या स्थिर है।) इस सूक्त को भूमि सूक्त तथा मातृ सूक्त भी कहा जाता है। उक्त सूक्त राष्ट्रिय अवधारणा तथा वसुधैव कुटुम्बकम् की भावना को विकसित, पोषित एवं फलित करने के लिए अत्यन्त उपयोगी सूक्त है।

इन मन्त्रों के माध्यम से ऋषि ने पृथ्वी के आदिभौतिक और आदिदैविक दोनों रूपों का स्तवन किया है । यहां सम्पूर्ण पृथ्वी ही माता के रूप में ऋषि को दृष्टिगोचर हुई है, अतः माता की इस महामहिमा को हृदयांगम करके उससे उत्तम वर के लिए प्रार्थना की है। यह सूक्त अथर्ववेद में अपना महत्वपूर्ण स्थान रखता है, इस सूक्त में पृथ्वी के स्वरूप एवं उसकी उपयोगिता, मातृभूमि के प्रति प्रगाढ़ भक्ति पर विशद् विवेचन किया गया है।

1.2. उद्देश्य

पृथिवी सूक्त के अध्ययन के उपरान्तर आप पृथिवी के स्वरूप एवं उसकी महामहिमा को सम्यक् रूप से जान पायेंगे तदोपरान्त आप बता सकेंगे कि-

- पृथिवी की उत्पत्ति एवं प्राकृतिक स्वरूप कैसा है।
- अथर्ववेद में पृथिवी का स्वरूप क्या है?
- पृथिवी के आदिभौतिक और आदिदैविक दोनों स्वरूप क्या है?

1.3 मन्त्रसंख्या 1-5 तक संहिता पाठ, (अन्वय, शब्दार्थ, व्याख्या)

काण्ड- 12, सूक्त-1 , ऋषि- अथर्वा, देवता- भूमि,

छन्द-1 से 3 तक त्रिष्टुप्, 4 से 6 षट्पदा जगती, 7- प्रस्तार पंक्ति, 8-षट्पदा विराट्, 9- परा अनुष्टुप्, 10- षट्पदा जगती, 11-षट्पदा विराट्, 12- पंचपदा शक्वरी, 13- पंचपदा शक्वरी, 14- महाबृहति, 15- पंचपदा शक्वरी,

संहिता पाठ

सत्यं बृहदृतमुग्रं दीक्षा तपो ब्रह्म यज्ञः पृथिवीं धारयन्ति ।
सा नो भूतस्य भव्यस्य पत्न्युरुं लोकं पृथिवी नः कृणोतु ॥१॥

अन्वय:- बृहद् सत्यं ऋतं उग्रं दीक्षा तप: ब्रह्म यज्ञं पृथिवी धारयन्ति, सा भूतस्य भव्यस्य पति पृथिवी न: लोक: उरूः कृणोतु।

शब्दार्थ:- **बृहद्**= प्रभावयुक्त, **सत्यं**= सत्यनिष्ठ, **ऋतं**= यथार्थ ज्ञान, **उग्रम्** = तेज, **दीक्षा**= कार्यों में दक्ष:, **तप:**= धर्म को, **ब्रह्म**= सत्य को, **यज्ञं**= यज्ञादि कर्म को, **पृथिवी**= पृथिवी को, **धारयन्ति**= धारण करते हैं।, **सा**= वह भूमी, **भूतस्य**= पूर्व से (प्राचिन काल से), **भव्यस्य**= भविष्य काल तक सृष्टि में उत्पन्न होने वाले पदार्थों को, **पति**= पालन करने वाली है। **सा पृथिवी**= वे पृथिवी, **न:**= हम सभी के लिए, **लोकम्**= निवास स्थान को, **उरूं** = विस्तीर्ण, **कृणोतु** = करे ।

अनुवाद:- तीनों कालों में रहने वाले सत्य (सत्यम), ब्रह्मांडीय दैवीय नियमों (ऋत), सर्वशक्तिमान (ब्रह्म) में विद्यमान आध्यात्मिक शक्ति, ऋषियों मुनियों के समर्पण भाव से किये गये यज्ञ और तप, इन सब ने पृथिवी को युगों –युगों से संरक्षित और संधारित किया है। वह (पृथ्वी) जो हमारे लिए भूत और भविष्य की सह्चरी है, साक्षी है, हमारी आत्मा को इस लोक से उस दिव्य ब्रह्मांडीय जीवन (अपनी पवित्रता और व्यापकता के माध्यम से) की और ले जाये।

टिप्पणी:- **सत्यम्**= वस्तु कथनं सत्यं, **ऋतम्**= ऋ+क्त। यथार्थ यथावत्, **ब्रह्म**= बृह्+मनिन् (बर्हणे) प्रथमा एकवचन, **यज्ञ**: = यज् + नड्., **धारयन्ति**= धृ+णिच् +लट्लकार प्रथमपुरूष बहुवचन, **भूतस्य**= भू+क्त , **भव्यस्य**= भू+यत् , **कृणोतु**= कृ+ लोटलकार प्रथमपुरूष एकवचन।

छन्द:- त्रिष्टुप्

संहिता पाठ

असंबाधं बध्यतो मानवानां यस्या उद्वत: प्रवत: समं बहु ।

नानावीर्या ओषधीर्या बिभर्ति पृथिवी न: प्रथतां राध्यतां न: ॥२॥

अन्वय:- यस्या: मानवानां ब्धयत: उद्वत् प्रवत: समं बहु असंबाधम् या नानावीर्या ओषधी: विभर्ती (सा) पृथिवी न: प्रथतां न: राध्यताम्।

शब्दार्थ:- **यस्या:** = जिस पृथिवी के, **मानवानां** = मनुष्यों के, **ब्धयत:** = माध्य से, **उद्वत्** = उन्नती से, **प्रवत:** = अवन्तिसे, **समं** = साथ से, **बहु** = अत्यन्त, **असंबाधम्** = मित्रता का भाव है, **या** = जो, **नानावीर्या** = अनेक गुणों से युक्त, **ओषधी:** = औषधी को, **विभर्ती**= धारणकरती है। **(सा) पृथिवी** = वह पृथिवी, **न:**= हमारे लिए, **प्रथतां** = समृद्धि युक्त, **न:** = हमारे लिए, **राध्यताम्**= अनुकूल होवें ।

अनुवाद:- वह पृथ्वी जो अपने पर्वत, ढलान और मैदानों के माध्यम से मनुष्यों तथा समस्त जीवों के लिए निर्बाध स्वतंत्रता (दोनों बाहरी और आंतरिक दोनों) प्रदान करती है। वह कई पौधों और विभिन्न क्षमता के औषधीय जड़ी बूटी को जन्म देती है उन्हें परिपोषित करती है, वह हमें समृद्ध करे और हमें स्वस्थ बनाये।

टिप्पणी:- ब्धयत: = मध्य + तसिल्, मानवानां = मनु+अण्+षष्ठीबहुवचन, असंबाधम् = न संबाधम् तत्पुरूष समास, ओषधी: = ओसं दधातीति, विभर्ती = भृ + लट् लकार प्रथमपुरूष एकवचन, प्रथतां = पृथ + लोट्लकार प्रथमपुरूष एकवचन, नानावीर्या = नाना वीर्याणि यासां ता (बहु0) राध्यताम् = राध्+ लोट्लकार प्रथमपुरूष एकवचन।

छन्दन:-त्रिष्टुप्

संहिता पाठ

यस्यां समुद्र उत् सिन्धुरापो यस्यामन्नं कृष्टयः संबभूवुः ।
यस्यामिदं जिन्वति प्राणदेजत्सा नो भूमिः पूर्वपेये दधातु ॥३॥

अन्वय:- यस्यां समुद्र: सिन्धु : उत् आप: (सन्ति) यस्यां कृष्टय: अन्नं सं बभूवु: यस्याम् इदं प्राणात् एजत् जिन्वति सा भूमि: न: पूर्वपेये दधातु।

शब्दार्थ:- यस्यां= जिस भूमिपर, **समुद्र:**= समुद्र, **सिन्धु:**= नदियॉ, **उत्**= तथा, **आप:= जल है** । **(सन्ति) यस्यां**= जिस भूमि में , **कृष्टय:**= किसान, **अन्नं**= अन्नादि को, **संबभूवु:**= उत्तपन्न करते थे, **यस्याम्**= उस भूमि में, **इदं** = यह, **प्राणात्** = प्राणवान्, **एजत्** = भोग्य प्रदार्थ, **जिन्वति**= चलते है, **सा**= वह, **भूमि:**= पृथिवी, **न:**= हम सबकों, **पूर्वपेये**= समस्त प्रदार्थो से, **दधातु**= स्थापित् करे ।

अनुवाद:- समुद्र और नदियों का जल जिसमें गूथा हुआ है, इसमें खेती करने से अन्न प्राप्त होता है, जिस पर सभी जीवन जीवित है, वह मॉ पृथ्वी हमें जीवन का अमृत प्रदान करे।

टिप्पणी:- समुद्र:= सम्मोदन्तेऽस्मिन् भूतानि। समुन्नतीति वा। **संबभूवु:**= सम्+भू+लिट्+ प्र0 पु0 बहु0 । **सिन्धु:**= स्यन्द् +उ। **अन्नं**= अद्+क्त। **कृष्टय:**= कृष+क्तिन, प्रथमा बहु0 । **प्राणात्**= प्र+अन्+शतृ । **जिन्वति**= जिन्व्+लट् लकार, प्र0 पु0 एक0। **एजत्**= एज्+शतृ । **दधातु**=धा+लोट+ प्र0 पु0 एक0।

छन्द:-त्रिष्टुप्

संहिता पाठ

यस्याश्चतस्रः प्रदिशः पृथिव्या यस्यामन्नं कृष्टयः संबभूवुः ।
या बिभर्ति बहुधा प्राणदेजत्सा नो भूमिर्गोष्वप्यन्ने दधातु ॥४॥

अन्वय:- यस्या: पृथिव्या: श्चतस्रः प्रदिशः (सन्ति) यस्यां कृष्टयः अन्नं संबभूवुः या: प्राणात् एजत् बहुधा बिभर्ति सा भूमि: न: गोषु अन्ने अपि दधातु।

शब्दार्थः- यस्या= जिस, **पृथिव्या**= भूमि की, **श्चतस्रः**:= चारों, **प्रदिशः**:= दिशाएं **(सन्ति)** **यस्यां**= जिस भूमि की, **कृष्टयः**:= किसान, **अन्नं**= अन्नादि , **संबभूवुः**:= पैदा करते है। **या**= वह, **प्राणात्एजत्**= जड चेतन रूप को, **बहुधा**= अनेक प्रकार से, **बिभर्ति**= धारण करती है, **साभूमिः**= वह पृथिवी, **नः**= हम को, **गोषु**= गो आदि एश्वर्य, **अन्ने**= अन्नादि, **अपि**= धन से,अन्न से , **दधातु**= स्थापित करें प्रदान करें ।

अनुवादः- जिस पृथिवी पर आदिकाल से हमारे पूर्वज विचरण करते रहे, यहा पर देवों (सात्विक शक्तियों) ने असुरों (तामसिक शक्तियों) को पराजित किया। जिस पृथिवी पर गाय, घोडा, पक्षी,(अन्य जीव –जंतु) ने पोषण किया। वह पृथिवी हमें समृद्धि और वैभव प्रदान करे।

टिप्पणीः- श्चतस्रः:= चतुर+प्रथमाबहुवचन। **प्रदिशः**:= प्र+दिश्+क्विप् प्रथमाबहुवचन।

छन्द :- षट्पदा जगती

संहिता पाठ

यस्यां पूर्वे पूर्वजना विचक्रिरे यस्यां देवा असुरानभ्यवर्तयन् ।
गवामश्वानां वयसश्च विष्ठा भगं वर्चः पृथिवी नो दधातु ॥५॥

अन्वयः- यस्यां पूर्वे पूर्वजनाः विचक्रिरे यस्यां देवाः असुरान् अभ्यवर्तयन् (या) गवाम् अश्वानां वयसश्च विष्ठा (सा) पृथिवी नः भगं वर्चः दधातु।

शब्दार्थः- यस्यां = जिस, **पूर्वे** = प्रचिन काल से, **पूर्वजनाः** = श्रेष्ठ पुरूषों ने, **विचक्रिरे** = विचरण किया, **यस्यां** = जिस पर, **देवाः** = देवताओं ने, **असुरान्** = दैत्यों ने, **अभ्यवर्तयन्** = पराजित किया था, **(या) गवाम्** = जिन गायों ने, **अश्वानां** = घोडों को, **वयसश्च** = पशु पक्षियों को, **विष्ठा** = विशिष्ट स्थान है , **(सा) पृथिवी** = वह भूमि, **नः** = हमकों, **भगं** = ऐश्चर्य, **वर्चः** = तेजको, **दधातु** = देने वाला है।

अनुवादः- उस पृथिवी के लिए नमस्कार जिस पृथिवी पर हमारे पर्वजनों ने पुरूषर्थ किया था। जिस पृथिवी ने पर्वत, और बर्फ से ढकी चोटिया, घने जंगल हमे शीतलता और सुखानुभुति प्रदान करें। हे मॉ आप अपने कई रंगों के साथ विश्वरूपा हो– भूरा रंग (पहाड़ों की), नीला रंग (समुद्र के जल का) , लाल रंग (फूलों का), (लेकिन इन सभी विस्मयकारक रूपों के पीछे) हे पृथिवी, आप ध्रुव की तरह हैं- दृढ और अचल, और आप इन्द्र, द्वारा संरक्षित हैं। (आपकी नींव जो कि अविजित है, अचल है, अटूट है, उस पर मै दृढ़ता से खडा हुं) वह पृथिवी हमें ऐश्वार्य और तेज प्रदान करें।

टिप्पणीः- विचक्रिरे = वि + कृ + लिट्लकार प्रथमपुरूषबहुवचन। देवाः = दानात् वा दीपनात् वा द्योतनात् वा । **असुरान** = न सुराः इति असुराः। **विष्ठा** = वि + स्था + क्विप्।

अभ्यवर्तयन् = अभि + वृ+ णिच् + लड्लकार प्रथमपुरूषबहुवचन।

छन्द :- षट्पदा जगती

अभ्यास प्रश्न -1

1- **पृथ्वी सूक्त किस वेद से संबंधित है।**

क- ऋग्वेद ख- यजुर्वेद

ग- सामवेद घ- अथर्ववेद

2- **अथर्ववेद के किस काण्ड में पृथ्वी सूक्त का वर्णन किया गया है।**

क- 12 वें काण्ड में ख- 10 वें काण्ड में

ग- 8 वें काण्ड में घ- 63 वें काण्ड में

3- **पृथ्वी सूक्त में कुल कितने मंत्र हैं।**

क- 12 ख- 3

ग- 64 घ- 50

4- **'मानवानां' में कौन सा प्रत्यय है।**

क- अण् ख- क्त

ग- क्तवु घ-अन्य

5- **पृथ्वी सूक्त के ऋषि हैं।**

क- कपिल ख- विश्वामित्र

ग- अथर्वा घ- अन्य

6- **'धारयन्ति' शब्द किस लकार किस वचन का है।**

क- लिट्लकार प्रथमपुरूषबहुवचन ख-लेट्लकार प्रथमपुरूषएकवचन

ग- लोट्लकार प्रथमपुरूषबहुवचन घ- लट्लकार प्रथमपुरूषबहुवचन

7- **रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिए।**

1-सत्यं बृहदृतमुग्रं ....पृथिवीं धारयन्ति ।

2- ....विचक्रिरे यस्यां देवा असुरानभ्यवर्तयन् ।

1.4 मन्त्र संख्या 6-10 तक संहिता पाठ, (अन्वय, शब्दार्थ, व्याख्या)

संहिता पाठ

विश्वंभरा वसुधानी प्रतिष्ठा हिरण्यवक्षा जगतो निवेशनी ।

वैश्वानरं बिभ्रती भूमिरग्निमिन्द्रऋषभा द्रविणे नो दधातु ॥६॥

अन्वय:- विश्वंभरा वसुधानी प्रतिष्ठा हिरण्यवक्षा जगत: निवेशनी वैश्वानरं अग्निं इन्द्र ऋषभौ बिभ्रती भूमि: न: द्रविणे दधातु।

शब्दार्थ:- विश्वंभरा= समस्त विश्व का पोषण करने वाले, **वसुधानी**= सुवर्णादि धनों से, **प्रतिष्ठा**= प्रतिष्ठित है, **हिरण्यवक्षा**= सुवर्ण गर्भ युक्त, **जगत:**= चेतना से युक्त जगत को, **निवेशनी**= निवास करने वाले, **वैश्वानरं**= वैश्वानर को, **अग्निं**= अग्नि को, **इन्द्र**= इन्द्र को, **ऋषभौ**= ऋषभादि देवताओं को, **बिभ्रती**= धारण करति हुई, **भूमि:**= भमि को, **न:**= हमको, **द्रविणे**= धनादि से, **दधातु**= प्रतिष्ठित करे।

अनुवाद:- जो पृथिवी! सम्पूर्ण विश्व को धारण करने वाली, स्वर्णादि धन को धारण करने वाली, सब को आश्रय देने वाली, स्वर्णादि धन को अपने वक्षस्थल पर में रखने वाली, स्थावर-जंगम जगत् को यथोचित स्थान में रखने वाली तथा वैश्वानर अग्नि को धारण करने वाली है और जिसके वराह भगवान पति हैं, वह पृथ्वी हमें विभिन्न प्रकार के धन प्रदान दें।

टिप्पणी:- विश्वंभरा= विश्व+भृ+टाप्। **प्रतिष्ठा**= प्रति+स्था+क्विप्। **हिरण्यवक्षा**= हिरण्यं वक्षं यस्या:सा। **निवेशनी**= नि+विश्+ल्युट् +डीप्। **बिभ्रती**= भृ+शतृ+डीप्।

छन्द :- षट्पदा जगती

संहिता पाठ

यां रक्षन्त्यस्वप्ना विश्वदानीं देवा भूमिं पृथिवीमप्रमादम्।
सा नो मधु प्रियं दुहामथो उक्षतु वर्चसा ॥७॥

अन्वय:- अस्वप्ना: देवा: यां विश्वदानीं मधुप्रियां दुहाम् पृथिवीं भूमिं अप्रमादम् रक्षन्ति सा न: वर्चसा।

शब्दार्थ:- अस्वप्ना:= निद्रा रहित, **देवा:**= देवता गण, **यां**= जिस, **विश्वदानीं**= सम्पूर्ण एश्वर्य को, **मधुप्रियां**= मधुर एवं प्रिय पदार्थों का, **दुहाम्**= दोहन करने वाली, **पृथिवीं**= यह विशाल काय , **भूमिं**= भूमि, **अप्रमादम्**= प्रमाद से रिक्त, **रक्षन्ति**= रक्षा करते है, **सा**= वह पृथिवी, **न:** = हम को, **वर्चसा**= अपने प्रकाश (तेज) से, **उक्षतु**= सेचन करे।

अनुवाद:- जो पृथिवी! संपूर्ण संसार को आश्रय देने वाली विस्तीर्ण है और जिसकी देवगन सावधान होकर रक्षा करते हैं, वह पृथिवी हमें गौ के द्वारा मधुर और प्रिय दुग्ध दे। अर्थात् वह पृथिवी हमें अपने तेज से सेचन करें।

टिप्पणी:- अस्वप्ना: = स्वप्नेभ्य: रहिता:। **मधुप्रियां** = मधुर: च प्रिया च, **रक्षन्ति** = रक्ष +

लट्लकार + प्रथमपुरूष बहुवचन। **वर्चसा**= वर्चस् + तृतीया एकवचन। **उक्षतु** = उक्ष् + लोटलकार प्रथमपुरूष एकवचन ।

छन्द :- प्रस्तार पंक्ति

संहिता पाठ

यार्णवेऽधि सलिलमग्न आसीद्यां मायाभिरन्वचरन्मनीषिणः ।

यस्या हृदयं परमे व्योमन्त्सत्येनावृतममृतं पृथिव्याः ।

सा नो भूमिस्त्विषिं बलं राष्ट्रे दधातूत्तमे ॥८॥

अन्वयः-या अग्रे सलिलम् अधि अर्णवे आसीत् यां मनीषिणं मायाभि: अन्वचरन् यस्या: पृथिव्याःअमृतं हृदयं परमेव्योमन् सत्येन आवृतम् (अस्ति) सा भूमि: न: उत्तमे राष्ट्रे त्विषिं बलं दधातु।

शब्दार्थः- या = जो भूमि, **अग्रे** = प्रलय काल में, **सलिलम्** = जल के, **अधि** = भितर, **अर्णवे** = क्षार युक्त समुद्र में, **आसीत्** = थी, **यां**= जिस पर, **मनीषिणं**=ऋषियों ने, **मायाभिः**= अपने कुशलता से, **अन्वचरन्**= विचरण किया था, **यस्याः**= जिस, **पृथिव्याः**= भूमि का, **अमृतं**= अमर शील, **हृदयं**= हृदय में, **परमेव्योमन्**= आकाश में, **सत्येन**= सत्य से, **आवृतम्**= परिव्याप्त है, **(अस्ति) सा**= वह, **भूमिः** = पृथिवी, **नः** = हमको, **उत्तमे** = श्रेष्ठ, **राष्ट्रे** = राष्ट्र में, **त्विषिंबलं** = उत्तम तेज बल से, **दधातु** = प्रतिष्ठित करें।

अनुवादः- जो पृथिवी! सृष्टि के आदि में समुद्र में जल के ऊपर विराजमान थी, जिस पृथिवी का मनु प्रभृती विद्वत् गणों ने अपने ताप के प्रभाव से अनुशासन किया था, जिस पृथिवी का हृदय सत्य से आवृत होकर परब्रह्म से अधिष्ठित है, और पृथिवी हमें उत्तम राष्ट्र (भारतवर्ष) में तेज और बल स्थापित करें।

टिप्पणीः- सलिलम्= षल+इलच। **अन्वचरन्**= अनु+चर्+लड्लकार प्रथमपुरूष बहुवचन। **आपृतम्**= आ+वृ+क्त। **राष्ट्रे**= राज्+ष्ट्रन्। **दधातु**= धा+लोट्लकार प्रथमपुरूष एकवचन।

छन्द :-षट्पदा विराट्

संहिता पाठ

यस्यामापः परिचराः समानीरहोरात्रे अप्रमादं क्षरन्ति ।
सा नो भूमिर्भूरिधारा पयो दुहामथो उक्षतु वर्चसा ॥९॥

अन्वयः- यस्यां परिचराःआप: समानी अहोरात्रे अप्रमादं क्षरन्ति सा भूमि धारा पय: न: दुहाम् अथ

वर्चसा उक्षतु।

शब्दार्थः- यस्यां = जिस पृथिवी में, **परिचराः** = विचरण करने वाले ऋषि जन, **आपः** = सर्वत्र बहने वाले जल के । **समानी** = समान भाव से, **अहोरात्रे** = दिन-रात, **अप्रमादं** = आलस्य के बिना, **क्षरन्ति** = विचरण करते हैं, **सा**= वह, **भूमि**= पृथिवी, **भूरिधारा**= अनेक प्रकार के प्रदार्थों वाली, **पयः** = ऐश्वर्य को, **नः** = हमको, **दुहाम्** = प्रदान करें, **अथ** = तथा, **वर्चसा**= तेजोमय प्रकाश से, **उक्षतु**= सेचन करे ।

अनुवादः- जिस भूमि पर जल की आधारभूत नदियां सर्वत्र स्वभाव रात दिन वहा करते हैं, वह अनेक धाराओं से संयुक्त भूमि हमें दूध दे और तेज से युक्त करें।

टिप्पणीः- परिचराः = परि+चर+ट+प्रथमपुरूष बहुवचन। **अहोरात्रे**= अहश्च रात्रिश्च अहोरात्रे-द्वन्द समास । **अप्रमादं**= न प्रमादम् । **क्षरन्ति**= क्षर+लट्लकार प्रथमपुरूष बहुवचन। **दुहाम्**= दुह+लोट् प्रथमपुरूष एकवचन। **उक्षतु**= उक्ष+लोट्लकार प्रथमपुरूष एकवचन।

छन्द :-परा अनुष्टुप्

संहिता पाठ

यामश्विनावमिमातां विष्णुर्यस्यां विचक्रमे ।

इन्द्रो यां चक्रे आत्मनेऽनमित्रां शचीपतिः ।

सा नो भूमिर्वि सृजतां माता पुत्राय मे पयः ॥१०॥

अन्वयः- याम् अश्विनौ अमिमातां यस्यां विष्णु: विचक्रमे शचीपतिः इन्द्र: यां आत्मने अनमित्रां चक्रे सा भूमि माता पुत्राय मे पयःविसृजताम्।

शब्दार्थः- याम्= जिस पृथिवी को, **अश्विनौ** = अश्विनी कुमारों ने, **अमिमातां**= मापा था, **यस्यां**= जिस पर, **विष्णुः** = विष्णु देवता ने, **विचक्रमे**= भ्रमण किया था, **शचीपतिः इन्द्रः** = इन्द्र कि पत्नी ने, **यां**= जिस को , **आत्मने** = स्वयं के लिए, **अनमित्रां**= शत्रुओं से रहित, **चक्रे**= वना दिया था, **सा**= वह, **भूमि**= पृथिवी, **माता पुत्राय**= जिस प्रकार माता पुत्र के लिए दुग्ध स्रावित करती है, **मे**= मेरे लिए भी, **पयः**= अन्नादि भोग्य पदार्थों को, **विसृजताम्**= उत्पन्न करे।

अनुवादः- जिस भूमि को अश्विनीकुमारों ने बनाया है, उसके ऊपर भगवान विष्णु ने वामन अवतार धारण कर पादविक्षेप किया और जिस भूमि को शचीपति इंद्र ने अपने हितार्थ शत्रु रहित किया है, वह माता की तरह भूमि हमारी संतति के लिए दूध दे।

टिप्पणीः- अमिमातां= माङ्+लङ्लकार प्रथम पुरूष द्विवचन । **विचक्रमे**= वि+क्रम+लिट्लकार

प्रथमपुरूष एकवचन। **अनमित्रां**= न अमित्राम् । **चक्रे**= कृ+लिट् +प्रथमपुरुष एकवचन। **माता**= माङ्+तृच+ प्रथमपुरुष एकवचन। **विसृजताम्**= वि+सृज+लोट्लकार प्रथमपुरूष एकवचन।

छन्द :-षट्पदा जगती

अभ्यास प्रश्न -2

1- विश्वम्भरा में कौन सा प्रत्तय है।

क- टाप् ख- यण्

ग- शतृ घ- ङीप्

2- हिरण्यवक्षा की व्युत्पत्ति है।

क- हिरण्यं वक्षं यस्या: सा ख- हिरण्यं च वक्षं च हिरण्यवक्षा

ग- हिरण्यं वक्षश्च हिरण्यवक्षा घ- अन्य

3- रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिए।

क- ....पयो दुहामथो उक्षतु वर्चसा ।

ख- सा नो भूमिर्वि सृजतां ....।

1.5 मन्त्र संख्या 11-15 तक संहिता पाठ, (अन्वय, शब्दार्थ, व्याख्या)

संहिता पाठ

गिरयस्ते पर्वता हिमवन्तोऽरण्यं ते पृथिवि स्योनमस्तु ।
बभ्रुं कृष्णां रोहिणीं विश्वरूपां ध्रुवां भूमिं पृथिवीमिन्द्रगुप्ताम् ।
अजीतेऽहतो अक्षतोऽध्यैष्ठां पृथिवीमहम् ॥११॥

अन्वय:- हे पृथिवी! ते गिरय: हिमवन्त: पर्वता:अरण्यं नश्योनम् अस्तु बभ्रुं कृष्णां रोहिणीं विश्वरूपां ध्रुवां इन्द्र गुप्तां पृथिवीं अहम् अजीत: अहत: अक्षत: अध्यैष्ठां (अधि अस्थाम्)।

शब्दार्थ:- हे पृथिवी! = हे भूमी!, **ते**= तुम्हारे, **गिरय:**= पर्वत, **हिमवन्त:**= हिम से आच्छादित, **पर्वता:**= पर्वत, **अरण्यं**= वन प्रदेश, **च**= और, **नश्योनम्**= सुख देने वाले, **अस्तु**= होवें, **बभ्रुं**= भूरे

वर्ण की, **कृष्णां**= काले वर्ण की, **रोहिणीं**= रक्त वर्ण की, **विश्वरूपां**= अनेक वर्ण वाली, **ध्रुवां**= स्थिर, **इन्द्रगुप्तां**= इन्द्र के द्वारा रक्षित, **पृथिवीं**= भूमी **अहम्**= मैं, **अजीतः**= अजेय, **अहतः**= शत्रुओं के द्वारा हिंसा रहित,**अक्षतः** = क्षत से रहित, **अध्यैष्ठां**= स्थापित हो जाऊॅ।

अनुवादः- हे पृथिवी! तूम से सम्बन्धित विशाल पर्वत, हिमयुक्त हिमालय आदि महापर्वत और जंगल यह सभी हमारे लिए सुखदाई हों। परमेश्वर से पालित विस्तीर्ण भूमि जो कि स्वभावत: कहीं पिंगल वर्ण वाली, कहीं श्याम वर्ण वाली, और कहीं रक्त वर्ण वाली है इस, उस पृथिवी पर हम अजीत, अक्षत होकर निवास करें।

टिप्पणीः- **गिरयः** = उभारा हुआ, गिरि:समुद्गीर्णो भवति। **हिमवन्तः** = हिम+मतुप्+प्रथमा बहुवचन । **पर्वताः** = पर्ववान् पर्वत:। **इन्द्र गुप्तां** = इन्द्रेण गुप्ताम्। **रोहिणीं** = राहित+डीप् । **कृष्णां** = कृष+क्त +टाप् । **अजीतः** = नञ्(अ)+जि+क्त:। **अहतः** = नञ्(अ)+हन्+क्त:। **अक्षतः** = नञ्(अ) + क्षत् +क्त:। **अधि अस्थाम्** =अधि+स्था+लङ्+उ0पु0एक0।

छन्द :- षट्पदा विराट्

संहिता पाठ

यत्ते मध्यं पृथिवि यच्च नभ्यं यास्त ऊर्जस्तन्वः संबभूवुः ।
तासु नो धेह्यभि नः पवस्व माता भूमिः पुत्रो अहं पृथिव्याः ।
पर्जन्यः पिता स उ नः पिपर्तु ॥१२॥

अन्वयः- हे पृथिवी! यत् ते मध्यं यच्च नभ्यं (अस्ति) या ते उर्ज: तन्व: संबभूवुः तासु न: अभिधेहि न: पवस्व भूमिः माता अहं पृथिव्याः पुत्र: पर्जन्यः पिता स उ नः पिपर्तु ।

शब्दार्थः- हे पृथिवी! यत् ते= जो तुम्हारा, **मध्यं**= मध्य स्थान है। **यच्च**= जो, **नभ्यं**= केन्द्र स्थान है, **(अस्ति) या ते**= जो, **उर्जः**= तेजोमय, **तन्वः** = शरीर, **संबभूवुः**= उत्पन्न हुए है, **तासु**= उस बलिष्ट शरीर से, **नः** = हम को, **अभिधेहि**= प्रदान कीजिये, **नः** = हमको, **पवस्व**= प्रवाहित हो, **भूमिः माता**= भूमि हमारी माता है, **अहं**= मैं, **पृथिव्याः**= इस पृथिवी का, **पुत्रः** = पुत्र हॅू, **पर्जन्यः**= मेघ, **पिता**= पालन कर्ता है, **स**= वह, **उ**= अवश्य ही, **नः**= हमको, **पिपर्तु**= पालन करे।

अनुवादः- हे पृथिवी! तुम्हारा जो मध्य स्थान तथा सुगुप्त नाभि स्थान एवं तुम्हारे शरीर संबंधी जो पोषण अन्य रस आदि पदार्थ हैं उनमें हमें धारण करो अर्थात् उन में हमें संयुक्त कीजिए, और हमें शुद्ध करो। भूमि हमारी माता है, हम पृथिवी के पुत्र हैं। मेघ हमारे पिता अर्थात् पालक हैं, वह हमारी रक्षा करें।

टिप्पणी:- तन्व:= तन्+उ+प्रथमा बहुवचन। **संबभूवुः**=सम्+भू+लिट्+प्र0पु0बहु। **उ**= निपात 'निश्चय अर्थ में '। **धेहि**=धा0लोट्+म0पु0एक0। **पवस्व**=पू+लोट्+म0पु0एक0,आत्मनेपद । **माता**= माङ्+तृच्। **धेहि**= दुह+लोट्लकार मध्यमपुरूष एकवचन। **पिता**= पा+तृच्। **पिपर्तु**= पृ+लिट्लकार प्रथमपुरूष एकवचन।

छन्द :-पंचपदा शक्वरी

संहिता पाठ

यस्यां वेदिं परिगृह्णन्ति भूम्यां यस्यां यज्ञं तन्वते विश्वकर्माणः ।

यस्यां मीयन्ते स्वरवः पृथिव्यामूर्ध्वाः शुक्रा आहुत्याः पुरस्तात् ।

सा नो भूमिर्वर्धयद्वर्धमाना ॥१३॥

अन्वय:- यस्यां भूम्यां वेदिं परिगृह्णन्ति यस्यां विश्वकर्माणः यज्ञं तन्वते यस्यां पृथिव्यां स्वरवः मीयन्ते पुरस्तात् उर्ध्वाः शुक्रा: आहुत्याः सा वर्धमाना भूमि: न: वर्धयद्।

शब्दार्थ:- यस्यां= जिस, **भूम्यां**= भूमि पर, **वेदिं**= हवन वेदि को, **परिगृह्णन्ति**= निर्माण करते है, **यस्यां**= जिस पर, **विश्वकर्माणः**= जगत् का निर्माण करने वाले , **यज्ञं**= यज्ञ का, **तन्वते**= विस्तार करते हैं। **यस्यां**= जिस, **पृथिव्यां**= पृथिवी में, **स्वरवः**= यज्ञमण्डल, **मीयन्ते**= स्थापित किये जाते है, **पुरस्तात्**= पूर्वदिशा से, **उर्ध्वाः**= श्रेष्ठ, **शुक्रा:** = श्वेत, **आहुत्या** = आहुतियॉ प्रदान की जाती हैं, **सा**= वह, **वर्धमाना**= विस्तार को प्राप्त हुई, **भूमि:**= पृथिवी, **न:** = हम सव के लिए, **वर्धयद्**= विस्तार करने वाली हावें।

अनुवाद:- जिस पृथिवी पर विश्वकर्मा अर्थात् जगत् के निर्माणकर्ता, ऋत्विक् और यजमान जिस पृथ्वी पर वेदी बनाते हैं एवं यज्ञ करते हैं। जिस पृथ्वी पर आहुति प्रक्षेप से पहले उन्नत और मनोहर यज्ञ स्तंभ गडे जाते हैं, वह पृथ्वी धन-धान्य से समृद्ध होकर हमें धन पुत्र आदि प्रधान द्वारा समृद्ध करें।

टिप्पणी:- परिगृह्णन्ति= परि+गृह्+लट्लकार प्रथमा बहुवचन। **तन्वते**= तनु + लट्लकार प्रथमा बहुवचन। **मीयन्ते**= माङ्+यक्+ लट्लकार प्रथमा बहुवचन। **वर्धमाना**= वृध+शानच्। **वर्धयद्**= वृध+विधिलङ्लकार प्रथमपुरूष एकवचन।

छन्द :- पंचपदा शक्वरी

संहिता पाठ

यो नो द्वेषत्पृथिवी यः पृतन्याद्योऽभिदासान्मनसा यो वधेन ।
तं नो भूमे रन्धय पूर्वकृत्वरि ॥१४॥

अन्वय:- हे पृथिवी! य: न: द्वेषत् पृतन्यात् य: मानसा अभिदासात् य: वधेन पूर्वकृत्वरि भूमे न: तं रन्धय।

शब्दार्थ:- हे पृथिवी! य:= जो व्यक्ति, **न:**= हम से, **द्वेषत्**= द्वेष करता है, **य:**= जो, **पृतन्यात्**= स्व बल से पराभूत करता हो, **य:** = जो, **मानसा**= मन से, **अभिदासात्**= हमको क्षीण या नष्ट करना चाहता हो, **य:**= जो, **वधेन**= हिंसक कार्यो में प्रवृत्त हो, **पूर्वकृत्वरि**= पूर्व काल में शत्रु दमन करने वाला है, **भूमे**= हे पृथिवी, **न:** = हम सबके लिए, **तं**= उन का , **रन्धय**= विनाश करो।

अनुवाद:- हे पृथिवी! जो शत्रु हम से द्वेष करें या जो हमारे साथ संग्राम करें अथवा जो हमें मारने की इच्छा करें तथा जो हमारा वध करने के लिए उद्यत हों हे शत्रु संहारिणि पृथिवी उन सभी शत्रुओं का तुम विनाश करो।

टिप्पणी:- अभिदासात्= अभि+दस्। **रन्धय**= रन्ध्+ लोट्लकार मध्यमपुरूष एकवचन।

छन्द :- महाबृहति।

संहिता पाठ

त्वज्जातास्त्वयि चरन्ति मर्त्यास्त्वं बिभर्षि द्विपदस्त्वं चतुष्पदः ।
तवेमे पृथिवि पञ्च मानवा येभ्यो ज्योतिरमृतं मर्त्येभ्य उद्यन्त्सूर्यो रश्मिभिरातनोति ॥१५॥

अन्वय:- हे पृथिवी! मर्त्या: त्वज्जाता: त्वयि चरन्ति त्वं द्विपद: चतुष्पदः बिभर्षि येभ्य: मर्त्येभ्य उद्यन् सूर्य रश्मिभि: अमृतं ज्योति: आतनोति इमे पंच मानवा: तव ।

शब्दार्थ:- हे पृथिवी! = हे पृथिवी, **मर्त्या:** = मरणशील मानवादि, **त्वज्जाता:** = तुम से ही जन्म लेते है, **त्वयि** = तुमहारे ऊपर ही, **चरन्ति** = विचरण करते हैं, **त्वं**= तुम ही, **द्विपद: चतुष्पदः**= मनुष्यादि पशु-पक्षियों को, **बिभर्षि**= धारण करती हो, **येभ्य: मर्त्येभ्य** = जिन मरणशील प्राणियों के लिए, **उद्यन्** = उदित होता हुवा, **सूर्य** = सूर्यि की, **रश्मिभि:**= किरणों से , **अमृतं ज्योति:** = अमृतरूपी प्रकाश, **आतनोति** = विस्तारित करता है, **इमे** = ये, **पंच मानवा:** = पंच प्रजातियों वाले मानव, **तव** = तुम्हारी ही सन्तान हैं ।

अनुवाद:- हे पृथिवी! तुमसे उत्पन्न हुआ मनुष्य तुम्हारे उपर विचरते हैं। तुम मनुष्य और पशुओं को धारण करती हो। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र और अन्त्यज ये पांच प्रकार के मनुष्य तुम्हारे ही हैं। इन्हीं मनुष्यों के लिए सूर्य उदित होकर अपनी किरणों द्वारा प्रकाश फैलाता है।

टिप्पणी:- जाता: = जन्+क्त। **चरन्ति** = चर्+लट्लकार। **बिभर्षि**= भृ+लट् लाकर। **मानवा:** = मनु+अण् । **उद्यन्**= उत्+यम्+शतृ। **आतनोति** = आ+तन्+लट्लकार प्र0 एक0।
छन्द :- पंचपदा शक्वरी

1.6 सारांश:-

इस इकाई के अध्ययन से आप ने जाना कि अथर्ववेद चारों वेदों में अन्तिम तथा अन्यतम है। पृथ्वी सूक्त मानव पर्यावरण सम्बन्धों तथा समस्याओं के संदर्भ में आज भी अपने रचनाकाल जितना या सम्भवत: उससे भी अधिक प्रासंगिक है। यह सूक्त मानव मात्र के उत्कर्ष की कामना का समूह गान है। इस सूक्त में पृथ्वी को जिन रूपों में देखा गया है, उसमें देश, काल, आदि का कोई स्थान नहीं है। ऋषि अथर्वन् की अवधारणा में पृथ्वी माँ का रूप है और मानव उसका पुत्र है। उक्त सूक्त में मातृभूमि के प्रति भक्ति का परिचय दिया गया है। ऋषि ने इस सूक्त में पृथ्वी के आदिभौतिक और आदिदैविक दोनों रूपों का स्तवन किया है। इस सूक्त के माध्यम से माता की महिमा का हृदयंगम करके उससे उत्तम भर के लिए प्रार्थना की है-**"माता भूमि पुत्रोंऽहं प्रथिव्या:"** कथन ऋषि की उदात्त भावना का परिचायक है। इस पृथ्वी सूक्त को अनेक लौकिक लाभों के लिए भी उत्तम बताया है। कृषिकर्म, पुत्रधनादि, आग्रहायणीकर्म, भूकम्प, महाशक्ति आदि के क्रम में इनका प्रयोग किया जाता है। क्योंकि प्रयोगविधि अथर्ववेदी विद्वानों का सिद्धांत है। यह सूक्त सभी दृष्टियों से उपयोगी और महत्त्वपूर्ण है।

1.7 पारिभाषिक शब्दावली

कृणोतु = कृ+ लोटलकार प्रथमपुरूष एकवचन (करोतु का वैदिक रूप), **नानावीर्या** = अनेक गुणों से युक्त, **समुद्र:** = सम्मोदन्तेऽस्मिन् भूतानि। **विश्वंभरा** = समस्त विश्व का पोषण करने वाले, **मधुप्रियां** = मधुर: च प्रिया च, **गिरय:** = उभारा हुआ, गिरि:समुद्गीर्णो भवति। **पूर्वकृत्वरि** = पूर्व काल में शत्रु दमन करने वाला है,

1.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न -1

1- ख- यजुर्वेद   2- क- 12 वें काण्ड में   3- ग- 64

4- क- अण्   5- ग- अथर्वा   6-घ- लट्लकार प्रथमपुरूषबहुवचन

7- रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिए।

1- दीक्षा तपो ब्रह्म यज्ञः

2-यस्यां पूर्वे पूर्वजना

अभ्यास प्रश्न -2

1- क- टाप्

2- क- हिरण्यं वक्षं यस्या: सा